International Journal of Multidisciplinary Education and Research
ISSN: 2455-4588
Impact Factor: RJIF 5.12
www.educationjournal.in
Volume 3; Issue 5; September 2018; Page No. 59-61

हिन्दी काव्य में राष्ट्रीय भावना की अभिव्यक्ति का अनुसंधान

डॉ0 कंचनलता सिंह
प्रोफेसर, स्वतंत्र गर्ल्स डिग्री कालेज, लखनऊ विश्व विद्यालय, लखनऊ, उत्तर प्रदेश, भारत

सारांश
राष्ट्रीयता एक ऐसी भावना है जिसका सम्बन्ध मानव की अन्तर चेतना से है और वह अनिर्वचनीय होने के कारण केवल अनुभूति का विषय है। इस प्रकार शब्दों के बंधन में राष्ट्रीयता का स्वरूप बंधना कुछ विचारकों को कठिन और अस्वाभाविक प्रतीत होता है फिर भी विद्वानों ने अपनी–अपनी दृष्टि से राष्ट्रीयता को परिभाषित किया है।

मूल शब्द : प्राचीन संस्कृति, राष्ट्रीयता, आदिकालीन भक्तिकाल, रीतिकाल, आधुनिक हिन्दी।

प्रस्तावना
गिलक्राइस्ट के अनुसार – राष्ट्रीयता एक ऐसी आन्तरिक भावना है जो उन लोगों में उत्पन्न होती है, जो एक ही जाति और स्थान से सम्बन्ध रखते हो, जिनकी भाषा, धर्म, इतिहास एवं आचार–विचार सामान्य हो और एक ही राजनैतिक आदर्श से संगठित हो। प्रो0 होलकोम्बे भी राष्ट्रीयता को परिभाषित किया है – 'राष्ट्रीयता एक सामूहिक भाव है, एक प्रकार की साहचर्य भावना है या पारस्परिक सहानुभूति है जो एक स्वदेश विशेष से सम्बन्धित होती है।' इसी प्रकार इनसाक्लोपीडिया ब्रिटेनिका में कहा गया है – 'राष्ट्रीयता मन की वह अवस्था है जिसमें व्यक्ति की सर्वोपरि कर्तव्य निष्ठा राष्ट्र के प्रति अनुभव की जाती है।'

विवेचना
राष्ट्रीयता के कुछ प्रमुख तत्व माने जाते हैं –
1. धर्म की एकता
2. जातीय एकता
3. सांस्कृतिक और ऐतिहासिक परम्परा की एकता
4. भाषा की एकता
5. धर्म की एकता
6. आर्थिक और राजनैतिक आंकाक्षा की एकता

प्राचीन संस्कृति एवं साहित्य में राष्ट्रीयता
राष्ट्रीयता भावना की झलक भारत में वैदिक वाड़मय से लेकर आधुनिक हिन्दी काव्य तक निरन्तर विद्यमान रही है। हमारे देश में पहले से ही एक पताका के नीचे एकत्र होने की प्रवृत्ति मिलती है और " पृथिव्यै समुद्र पर्यन्ताया एक राष्ट्र " की घोषणा से यह स्पष्ट है। वैदिक साहित्य में तो पारस्परिक सद्भाव की बुद्धि पर जोर किया गया है। ऋग्वेद में एक स्थान पर स्पष्ट उल्लेख है –

"समानीव आकृतिः समाना ह्रदयानि वः।
समानमस्तु वो मनो यथावः सुसहाससि।।"

अर्थात् तुम लोगों के समस्त संकल्प समान हो, समस्त ह्रदय एक हो और अन्तःकरण समतुल्य हो, जिसमें तुम में परम् एकत्व का संसार हो।

राष्ट्र के प्रति सम्मान और उसके गौरव रक्षा की भावना भी अथर्ववेद में मिलती है – 'अस्मान् वृहणस्पटेऽभि राष्ट्रीय वर्धय' अर्थात् हे! वृहणस्पटे हमें राष्ट्र के लिए बढ़ाओ। वेदों, स्मृतियों व पुराणों आदि में देश कण–कण एक ही राष्ट्र के अन्तर्गत होने की भावना विद्यमान है।
अथर्ववेद के विनीत भाव से कहा गया है "भूमे मातर्नि मा भद्रया सुप्रतिष्ठितम्" अर्थात् हे पृथ्वी माता तू कृपाकर मुझे भली–भाँति प्रतिष्ठित कर।" 'विष्णु–पुराण' में भारत की महानता और रमता का वर्णन करते हुए कहा गया है –

गायन्ति देवा किल गीतकानि धन्यास्तु ते भारत भूमि भागे।
स्वर्गाय वर्गास्पद मार्ग भूते भवन्ति भूयः पुरुषाः सुरत्वात्।।

इस प्रकार भारत को एक ऐसी भूमि माना गया है जहाँ जन्म ग्रहण करके ही स्वर्ग या अपवर्ग प्राप्त किया जा सकता है। जननी और जन्मभूमि को स्वर्ग से भी महत्तर कहा गया है –

जननी जन्मभूमि स्वर्गादपि गरीयसी।

राष्ट्रीय एकता के लिए भाषा की एकता भी आवश्यक मानी गयी है और प्राचीन भारत में एक भाषा थी संस्कृत। जो जन साधारण में राष्ट्रीय भाषा के रूप में साधारण बोल–चाल में भी प्रयुक्त होती थी। हमारे देश के सम्बन्ध में यह निर्विवाद है कि प्राचीन काल में आर्यों का एक ही वैदिक धर्म था और धार्मिक एकता के समान ही भारत में आर्थिक एकता की भी आकांक्षा रही है। ऋग्वेद में ही स्पष्टता एकत्र होकर धन प्रदान करने वाले व्यापार को करने की आकांक्षा व्यक्त की गयी है –

एताधियं कृणवामा सखायोऽय या मातां ऋणतु ब्रजं गौः।
यया मनु विशि शिप्रं जिगाय यथा वजिग्विड़ कुराया पुरीषम।।

ऐतिहासिक अनुसंधान से यह सिद्ध हो गया है कि वैदिक समय से भी पूर्व हमारे देश में राष्ट्रीयता का प्रादुर्भाव हो चुका था। इस बात के अनेक प्रमाण मिलते है कि हमारे देश में गुप्त साम्राज्य के समय तक राजनैतिक एकता विद्यमान रही है तथा हर्ष की मृत्यु के

पश्चात् ही सम्पूर्ण उत्तर भारत छोटी–छोटी रियासतों में विभाजित हो गया और राजनीतिक अराजकता फैल गयी।
श्री मा0 स0 गोलवलकर ने हमारी संग्रहीयता नामक कृति में उचित ही कहा है –
"दूरतम् अतीत में भी प्राचीन हिन्दुओं में राष्ट्रीयता का पूर्ण बोध तथा उसका फल राष्ट्रीय चेतना अविछिन्न रूप से जाग्रत थी तथा यह भावना देशांतर से लायी हुई थी आजकल की उपज नहीं है। "

आदि कालीन कविता में राष्ट्रीय भावना

हिन्दी साहित्य का आदि काल अनेक आघातों–प्रतिघातों का काल था और एक ओर तो विदेशी आक्रमणकारियों के सतत् आक्रमणों से भारत भूमि आक्रान्त थी तथा दूसरी ओर झूठी शान और आन के कारण देशी राजा पारस्परिक फूट एवं आन्तरिक संघर्ष से परेशान भी थे। इस विषम परिस्थिति में हमारे कवि अपने कर्तव्य से विमुख नहीं हो गये और उन्होंने आश्रय दाताओं के शौर्य और उत्साह से बुझते हुए दीप को ओजमयी वाणी प्रदान की तथा वीर काव्यों की रचना की। वीर काव्यों में सर्वाधिक प्रसिद्ध तथा विशालकाय महाकाव्य पृथ्वीराज रासों का नायक पृथ्वीराज राष्ट्रीय वीर पुरूष ही है और कवि चंदबरदाई ने उससे कहलाया भी है –

"सा पुरूष जीवंत विय प्रकार, समरै एक कित्ती संसार।
जीरन सु जुग्ग इह जलै बन्त, संसार सार गल्हा निस्त।।"

आदिकालीन हिन्दी साहित्य की वीर रस प्रधान रचनाओं में आल्हा खण्ड का भी विशिष्ट स्थान है। डॉ0 रामकुमार वर्मा के शब्दों में "वीरत्व की मनोरम गाथा है जिसमें गौरव और उत्साह की मर्यादा सुन्दर रूप से निभायी गयी है। "
हिन्दी साहित्य के आदि काल में एक ओर चरण कवियों द्वारा रासों ग्रन्थों व वीर काव्यों की परम्परा विकसित हो गयी तो दूसरी ओर अपभ्रन्श साहित्य का भी समुचित विकास हुआ। कालांतर में मध्यकालीन अनेक राजस्थानी डिंगल कवियों ने जातिय गौरव से अनुप्राणित मुक्तक छंद रचे है। उस समय समस्त हिन्दु गौरव के प्रतिनिधि एवं प्रतीक महाराणा प्रताप थे और उन्हें ही आलम्बन बनाकर उक्त डिंगल कवियों ने अनेक ओजस्वी कवितायें प्रस्तुत की है। डिंगल के प्रसिद्ध कवि दुरसा जी ने भी प्रताप के गुणों की प्रशंसा बारम्बार की है –

अकबर पथर अनेक, कै भूपत भेला किय।
हाथ न लागो हेक, पारस राज प्रताप सी।।
अकबर समन्द अथाह, तिह डूबा हिन्दू तुरक।
मेवाणों तिण माँह, पोयण फूल प्रताप सी।।
भक्ति काल और रीतिकाल में राष्ट्रीयता –

भक्ति काल में धार्मिक दृष्टिकोण की प्रधानता दिखाई पड़ती है पर उसे राष्ट्रीयता से शून्य नहीं कहा जा सकता। भक्तिकाल की निर्गुण धारा के प्रसिद्ध कवि कबीर की उक्तियों में इसी राष्ट्रीयता को स्थापित करने की भावना विद्यमान है। डॉ0 इन्द्रनाथ मदान के शब्दों में यदि उन्हें अनेक समय का गांधी कहा जाये तो अतिशयोक्ति न होगी ....
गांधी जी इस प्रकार चालीस कोटि भारतीय जनता का ह्रदय सम्राट है, उसी प्रकार कबीर भी अपने समय की दलित और पीड़ित जनता का नायक था। गांधी जिस प्रकार हिन्दू–मुस्लिम ऐक्य का प्रबल समर्थक है उसी प्रकार कबीर भी दोनों को एक बनाने के लिए व्यग्र था..........................गांधी मानो कबीर का आधुनिक संस्करण था। कबीर की क्रान्तिकारी वाणी निम्न पंक्तियों में दृष्टव्य है –

गहना एक कनक ते गहना, तामे भाव न दूजा।
कहन हम सुनन को दुई कर पाते, इक निमाज, इक पूजा।।
वही महादेव वही मुहम्मद, ब्रह्मा आदिर्म कहिए।
कोई हिन्दू कोई तुरूक कहावे, एक जमीं पर रहिए।।

कबीर के सदृश अन्य कवियों ने भी हिन्दू–मुस्लिम एकता स्थापित करने में अपना महत्वपूर्ण योग दिया है और उनकी यह ऐक्य भावना सांस्कृतिक राष्ट्रीयता की कोटि में आती है।
भक्ति कालीन सगुण धारा में राष्ट्रीयता के दर्शन होते है। सूरदास के प्रेम एवं वात्सल्य पूर्ण भक्ति के आधार जातीय जीवन की निराश आत्मा में आशा का संचार कर तत्कालीन समाज का सच्चा प्रतिनिधित्व जनता की कुत्सित मनोवृत्तियों का परिष्कार कर उन्हें ब्रह्ममय् कृष्ण की ओर उन्मुख करके सूरदास ने लोक कल्याण का बड़ा कार्य किया। इसी प्रकार राम भक्ति शाखा के प्रतिनिधि कवि गोस्वामी तुलसीदास सांस्कृतिक राष्ट्रीयता के श्रेष्टतम् नायक कहे जाते है। वे शुभ प्रवर्तक थे, भक्ति शिरोमणि, राजनीति विशारद थे तथा साथ ही वे साहित्य गगन के सुधानिधि थे। तुलसी की पुरूषार्थ भावना निम्न पंक्तियों में दृष्टव्य हैं –

कादर मन का एक अधारा, देव देव आलसी पुकारा।

रीतिकालीन काव्य में तो श्रृंगार की ही प्रधानता रही है, पर महाकवि भूषण अवश्य श्रृंगार के उद्दाम वेग की अपेक्षा करते हुए राष्ट्रीयता को अक्षुष्ण बनाये रखने में समर्थ रहे है। भूषण ने छत्रपति शिवाजी और छत्रसाल की शूरता के ओजस्वी वर्णन में राष्ट्रीय भावों की समर्थ अभिव्यक्ति की है और उन्होंने समाज की उन कुरूतियों का उल्लेख किया है जिनके कारण इतनी वैभवशाली जाति का पतन हो गया।

आपस की फूट से ही सारे हिन्दुवान टूटे,
टूट्यो कुल रावन अनीति अति करते।।
पैठिगो पाताल बालि, ब्रजधर ईरषाते।
टूट्यो हिरनाक्ष अभिमान चित्त धरते।।

आधुनिक हिन्दी कविता में राष्ट्रीय भावना

वस्तुतः आधुनिक हिन्दी कविता का विकास उन परिस्थितियों में जब कि सम्पूर्ण भारत में ब्रिटिश शासकों के विरूद्ध स्वतंत्रता का आंदोलन चल रहा था। अतः काव्य में राष्ट्रीय भावनाओं का उन्मेष स्वाभाविक ही है। इस प्रकार आधुनिक हिन्दी कविता के प्रारम्भ में ही भारतेन्दु हरिश्चन्द्र और उनके युग के अन्य कवियों ने देश की दुर्दशा का वर्णन करते हुए भारतीय जनता को जागृत करने का प्रयत्न किया है। डॉ0 विद्यानाथ गुप्त के शब्दों में भारतेन्दु युग के कवि एक नवींन दृष्टिकोण लेकर काव्य जगत के विशाल प्रांगण में विचरण कर रहे थे। इस प्रकार भारतेन्दु युगीन राष्ट्रीयता का क्षेत्र बहुत व्यापक है। इस युग की कविताओं में जन्मभूमि के प्रति अनुराग भी झलकता है और कवि प्रेमधन को अपनी जन्मभूमि के

समान विश्वभर में कोई स्थान सुंदर नहीं एवं सुखकर नहीं जान पड़ता है –

वह मनुष्य कहिबेके, योग न कबहुँ नीच नर,
जन्मभूमि निज नेह नाहि जाके उर अन्तर।।
यद्यपि बस्यो संसार सुखद् थल विविध लखहि।
जन्मभूमि की पै छवि मनते विसरत नही।।

सामान्यता द्विवेदीयुगीन काव्यधारा में भारतीय युगीन राष्ट्रीय भावना का निखरा हुआ रूप ही दिखाई देता है। इस युग में सत्य नारायण कवि रत्न, श्रीधर पाठक, अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध', मैथिलीशरण गुप्त, राम नरेश त्रिपाठी, गया प्रसाद शुक्ल सनेही, सियाराम शरण गुप्त और वियोगी हरि आदि कवियों ने राष्ट्रीय भावनाओं को त्रिपिबद्ध किया है। मैथिलीशरण गुप्त की 'भारत–भारती' इस युग की प्रतिनिधि राष्ट्रीय कृति मानी जाती है। 'भारत–भारती' में अतीत दर्शन के साथ वर्तमान चिन्तन और भविष्य की कल्पना भी मिलती है –

"देखो हमारा विश्व में कोई नहीं उपमान था,
नर देव ये हम और भारत देवलोक समान था।"

और भी

"कौन थे, क्या हो गये है और क्या होंगे अभी,
आओ विचारें आज मिलकर ये समस्यायें सभी।"

उन्होंने कहा है –

"जिसको निज गौरव तथा निज देश का अभिमान है,
वह नर नहीं पशु निरा है और मृतक समान है।"

माखनलाल चतुर्वेदी देश के गौरव हेतु जीवन का उत्सर्गीकरण ही जीवन मानते है–

"बलि होने की परवाह नहीं, मैं हूँ कष्टों का राज्य रहे,
मैं जीता जीता जीता हूँ, माता के हाथ स्वराज्य रहे।"

आधुनिक कवियों में राष्ट्रीयता का सर्वाधिक ओजमय एवं प्रशस्त रूप दिनकर में मिलता है।

कुछ समीक्षक छायावादी कविता का मूल्यांकन करते रहते है कि छायावादी कवि राष्ट्रीय आंदोलन से प्रायः विमुख रहे है पर यह आरोप युक्ति संगत नहीं प्रतीत होता है क्योंकि प्रसाद निराला पतं आदि छायावादी कवियों की कृतियों में भी राष्ट्रीय भावनाओं का चित्रण हुआ है।

प्रसाद की निम्न पंक्तियाँ राष्ट्रीय भावना से ओत–प्रोत हैं –

"जिये तो सदा उसी के लिए यही अभिमान रहे यह हर्ष,
निछावर कर दें हम सर्वत्व, हमारा प्यारा भारतवर्ष।"

निराला की 'जागो फिर एक बार' खण्डहर के प्रति, यमुना के प्रति आदि कविताओं में भारतीय संस्कृति का विशद वर्णन हुआ है।

सन् 1947 में भारत के स्वतंत्र होने पर कवियों का ध्यान अन्य विषयों की ओर अवश्य आकृति हुआ पर राष्ट्रीयता की धारा सर्वथा मन्द पड़ गया परन्तु कालान्तर में चीन और पाकिस्तान द्वारा भारतीय सीमा पर अतिक्रमण होने पर राष्ट्रीय भावना की दीपशिखा पुनः प्रधान वर्जित हो गयी। दिनकर की पंक्तियों में कहा –

"ओ गांधी के शांत सदन में आग लगाने वाले,
वैसे तो मन मार शील से हम विनम्र जीते है,
आतितयों का शोषित, लेकिन हम भी पीते है।"

निष्कर्ष

इस प्रकार हम देखते है कि हिन्दी कविता में आदिकाल से लेकर अद्यावधि राष्ट्रीय भावना की अभिव्यक्ति होती रही है और हमें पहले सच्ची राष्ट्रीयता का ही विकास करना चाहिए तदुपरान्त अन्तर्राष्ट्रीयता की ओर ध्यान देना उचित होगा। सच तो यह है कि राष्ट्र की कुटुम्ब मानकर राष्ट्रीय एकता के निर्माण पर पूर्ण ध्यान देकर ही हम 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की भावना फलीभूत कर सकेंगे।

संदर्भ ग्रन्थ

1. डॉ॰ सावित्री श्रीवास्तव – रत्नाकर की काव्यभूमि
2. डॉ॰ जगदीश प्रसाद श्रीवास्तव – साठोत्तरी कविता
3. केदार नाथ कोमल – आज की कविता
4. डॉ॰ बाबूराम त्रिपाठी – निराला काव्य–एक मूल्यांकन
5. डॉ॰ श्रीपाल सिंह 'क्षेम' – सुमित्रानन्दन पन्त की काव्य चेतना
6. डॉ॰ कुमुद प्रभा श्रीवास्तव – महादेवी वर्मा की काव्य दृष्टि
7. डॉ॰ विश्वनाथ प्रसाद – धूमिल की काव्य रचना
8. डॉ॰ हरदयाल – रघुवीर सहाय की कविता
9. डॉ॰ विष्णुदत्त राकेश – पन्त जी का नवींन बोधकाव्य
10. डॉ॰ ओम प्रकाश राय –आधुनिक पाँच लम्बी कविताओं का
11. रचना–शिल्प
12. डॉ॰ जयशंकर प्रसाद – झरना, आंसू
13. डॉ॰ जयशंकर प्रसाद – लहर, कामायनी
14. डॉ॰ राम सुधार सिंह – कविवर भवानी प्रसाद मिश्र